भारत के संविधान में मानवाधिकार और मौलिक अधिकार

विजय कुमार, शोधार्थी, विधि विभाग, सी० एम० जे० विश्वविधालय
डॉ० मुकुल गुप्ता, प्रवक्ता, विधि विभाग, एस० डी० कॉलेज ऑफ लॉ मुजफ्फरनगर, (यू०पी०)

सार

मानवाधिकारों को उन अधिकारों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो हमारी प्रकृति में निहित हैं और जिनके बिना हम मनुष्य के रूप में नहीं रह सकते हैं। इस तथ्य के आधार पर दावे किए जाते हैं कि हम मनुष्य हैं। यह पेपर भारतीय संविधान में मानवाधिकारों से संबंधित है। यह पेपर भारत में अधिकारों की सुरक्षा के लिए न्यायपालिका और न्यायिक सक्रियता की भूमिका का विश्लेषण करने का एक प्रयास है। स्वतंत्रता के बाद भारत ने अधिकारों के संरक्षण में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत ने अपने संविधान में अधिकारों के एक विस्तृत विधेयक को शामिल नहीं किया है, इन वास्तविकताओं का अनुवाद करने के प्रयास किए गए हैं। भारत में न्यायपालिका ने इन अधिकारों को हकीकत में तब्दील करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

कीवर्ड- मानवाधिकार, मौलिक अधिकार, सरकारी/गैर-सरकारी मानवाधिकार।

1. परिचय

मानव जाति का राजनैतिक विकास आधिकारो के लिए संघर्ष का इतिहास रहा है राजनीतिक विकास, प्रत्येक चरण में शासक व शासित के मध्य सम्बन्धों की पुनः व्याख्या व पुनः रचना है शासक व शासित के मध्य सम्बन्धों में शासक का वर्चस्व स्वाभाविक है। यह वर्चस्व ही निरंकुषता, अत्याचार और अन्याय को जन्म दे सकता है। अतः सदैव यही आवश्यकता रही है कि सत्ता को कैसे परिभाषित किया जाए, तथा कितनी मात्रा में इसे नियन्त्रित किया जाए। स्पष्ट है कि संविधानवाद एक ऐसी पृष्ठभूमि तैयार करता है जिसमे मानव अधिकार साकार हो सकते है। अधिकारों के लिए संघर्ष ही होता रहा है। एक विशेष सामाजिक व्यवस्था में विशेष अधिकार भी होते है जिसमें अल्प ही राजव्यवस्था द्वारा स्वीकृत होते है। लेकिन इनका आधार समाज अवश्य ही होता है।

प्रस्तुत अध्याय में शोधार्थी का उद्देश्य अधिकार शब्द की व्याख्या करना नही है बल्कि उद्देश्य है कि मानव अधिकार किस परिस्थिति में परिभाषित हुए है।

व्यक्तियों के कतिपय अधिकार होते है, जो इसके व्यक्तित्व में निहित होते है। ऐसे अधिकारों को प्राकृतिक अधिकार कहा जाता हैं। मनुष्य एक नैतिक व विवकेशील प्राणी होने के नाते कुछ सुविधाओं

के लिए अधिकारिक है इन अधिकारों को ही मानव अधिकार कहा जाता है। ये अधिकार मनुष्य के व्यकितत्व की गरिमा से जुड़े है।

मानव अधिकार और मौलिक स्वतन्त्रता सार्वभौमिक रूप से स्वीकृति आदर्श रहा है। लेकिन इस विषय को इतिहास में इतना महत्व नही दिया गया जितना कि इसे आज दिया जा रहा है।

मानव अधिकारों के संरक्षण का मूल भारत में वैदिक काल के धर्म में पाया जाता है 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। गीता में भी मानवाधिकार का उल्लेख है– 'कर्मण्येवाधिकारस्ते'।

मानव अधिकारों को संविधान में स्थान देकर उन्हें न्यायिक पुनर्विलोकन द्वारा प्रवर्तनीय बनाने की उपलब्धि विश्व इतिहास में सबसे पहले संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान को प्राप्त हुई यद्यपि जॉन लॉक की सोशल काण्ट्रैक्ट की कल्पना ने इसे तर्कसंगत रूप में प्रतिपादित करने में बहुत सहायता की, तथापि मूल अधिकारों का वास्तविक आधार मानव कल्याण में उन अधिकारों की महान उपयोगिता थी, न कि जॉन लॉक की सोशल काण्ट्रैक्ट की कल्पना। यही कारण है कि जॉन लॉक का दार्शनिक सिद्धांत यद्यपि काल्पनिक ही था, तथापि सदियों से मूल अधिकारों में मानव की आस्था बनी हुई है।

संयुक्त राष्ट्र संघ मानव अधिकारों एवं मूलभूत स्वतन्त्रताओं में वृद्धि करने और इनका संरक्षण करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है। इसी उद्देश्य से महासभा में अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार सम्बन्धी विधेंयक पारित किया गया जिसमें निम्नलिखित अन्तर्राष्ट्रीय घोषनाएं एवं प्रपत्र सम्मिलित है।

1. अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार घोषणा– 1948.
2. धर्म, जाति, भाषा, लिंग, रंग, वंश इत्यादि के आधार पर इनके उपयोग पर कोई भेदभाव नही होगा।
3. संयुक्त राष्ट्र संघ के सभी सदस्य देशों के मध्य इन मानव अधिकारों और मूलभूत स्वतन्त्रताओं के प्रति समान सूझ–बूझ और सद्भावना तैयार करने का प्रयास किया जाएगा।
4. स्वाभाविक है कि एक ऐसा अभिकरण बनाया जाए जिस के माध्यम से सदस्य राज्यों पर मानव अधिकारों और मूलभूत स्वतन्त्रताओं के अनुपालन पर निगरानी रखी जा सकें।

सामान्यतः मानव अधिकारों को तीन श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है।

1. नागरिक व राजनैतिक अधिकार
2. आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकार
3. वर्गीय अधिकार

मानव अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणाएंः

मानव अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ आयोग ने कहा, कि वह मानव अधिकारों के सम्बन्धी सामान्य सिद्वान्तों पर एक प्रपत्र तैयार करे। (दो वर्ष छः माह) के पश्चात् मानव अधिकार आयोग ने मानव अधिकारों पर सार्वभौमिक घोषणा का एक प्रपत्र तैयार किया। जो सभी देशों के लिए उपलब्ध एक

मानक होगा। यह घोषणा, जो मानव जाति के इतिहास में अपने प्रकार की पहली घोषणा है, उसे 10 दिसम्बर 1948 को महासभा द्वारा स्वीकृत किया गया। यह घोषणा मानव अधिकारों की प्रथम परिभाषा है इसलिए 10 दिसम्बर को मानव अधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है। मानव अधिकार घोषणा में प्रस्तावना सहित 30 अनुच्छेद है।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा सम्पूर्ण मानव जाति के लिए महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। यह सर्वत्र सब के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अधिकार प्रपत्र है।

2. भारतीय संविधान एवं मानव अधिकार

भारतीय सभ्यता व संस्कृति में मानव अधिकारों के दृष्टान्त हमें मनुस्मृति और सबसे अधिक कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मिलते है। यद्यपि इन अधिकारों की स्पष्ट व्याख्या इन संहिताओं में नही है लेकिन यत्र तत्र इनका सन्दर्भ हमें मिलता है।

भारत अपनी सभ्यता व संस्कृति के प्रारम्भिक विकास से ही विकास मानव अधिकारों के प्रति संवेदनशील रहा है अगर भारतीय धार्मिक ग्रन्थों, वेंदो, पुराणों व उपनिषदों का अध्याय किया जाए, तो स्पष्ट होगा मानव अधिकार भारतीय संस्कृति मे रचे बसे रहे है और इनका सम्मान किया जाता आ रहा है।

भारत एक ऐसा देश है। जिसमें विभिन्न धर्म, संस्कृति, भाषा के लोग एक साथ निवास करते है तथा उनका सम्पूर्ण धार्मिक कार्य आस्था के आधार पर ही होता था। जब भारत में ब्रिटिश सरकार ने भारत के छोटे–2 माामलों मे हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। 1757 के अंग्रेजों और सिराजुद्दौला की सेनाओं में 23 जून 1757 को प्लासी नामक स्थान पर युद्ध हुआ, जिसमें अंग्रेजो को विजय प्राप्त हुई। भरतीय संविधान में भारतीय शासन अधिनियम–1935 का लगभग 75% अंश जोड़ा गया क्योंकि संविधान सभा ने माना कि यह कितना उपयोगी होगा तथा भारतीय संविधान में ऐसी भी व्यवस्था की गई, कि राज्यों के संविधान का प्रबन्ध किया गया, भारत में केवल एक ऐसा राज्य है जिससे विशेष राज्य का दर्जा प्राप्त है। वह जम्मू कश्मीर इसके लिए अनुच्छेद 370 का प्रावधान है। भारतीय संविधान के अध्याय–3 में वर्णित मौलिक अधिकार तथा अध्याय–4 में राज्य के नीति–निदेशक तत्वों का समावेश है जो क्रमशः अमेरिका तथा आयरलैण्ड से लिये गए है। संविधान के 42 वें संशोधन द्वारा इसमें नागरिकों के मूल कर्त्तव्य को भी जोड़ा गया है। वैसे इसके अन्तर्गत कोई विधि शक्ति नही है फिर भी इसको मूल अधिकारों के समान माना जाता है। भारतीय संविधान की निम्नलिखित विशेषताऐ है–

1. निर्मित, लिखित और सर्वाधिक व्यापक संविधान।
2. मौलिक अधिकार और मूल कर्त्तव्य को समावेश करने वाला।
3. स्वतन्त्र न्यायपालिका और अन्य स्वतन्त्र अभिकरण।
4. सामाजिक समानता की स्थापना।
5. नई विदेशी संविधानों के तत्वों का समावेश।

भारतीय संविधान की प्रकृति के बारे में अलग–2 विद्वानों के अपने विचार है, कुछ इससे संघात्मक संविधान की संज्ञा देते है जबकि कुछ विद्वानों इससे एकात्मक संविधान मानते है यह दोनो मत बिल्कुल अतिवादी है जबकि भारत का संविधान न तो एकात्मक और न तो संघात्मक वरन् इसके अन्र्तगत दोनो ही तत्व विद्यमान है। इसलिए भारतीय संविधान को अर्धसंघीय व्यवस्था कहा जाता है शोधार्थी द्वारा भारतीय संविधान के बारे में प्रमुख तथा उसका किस प्रकार निर्माण हुआ।

3. नीति निदेशक तत्व एवं मानव अधिकार

तेहरान में मानव अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने यह प्रकट किया कि आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की उपलब्धि के बिना सिविल और राजनीतिक अधिकारों का कार्यान्वयन सम्भव नहीं था। इस तथ्य से अवगत होने पर मानव अधिकार आयोग ने अपने 14 मार्च 1985 के संकल्प में विश्व के बहुत से देशों में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के कार्यान्वयन में भारी अन्तराल प्रबल होने पर गहरी चिन्ता व्यक्त किया। आयोग के अभिमत में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के कार्यान्वयन को संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के ढांचे में प्राप्त ध्यान नहीं मिला। अतएव इसने राज्यों से अपनी नीति इस प्रकार से निर्देशित करने के लिये अनुरोध किया जिससे कि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की उपलब्धि उत्तरोत्तर सम्भव हो जाए।

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में सम्मिलित है जो महासभा द्वारा 16 दिसम्बर, 1996 को पारित की गई थी और 3 जनवरी, 1976 को प्रवृत्त हुई।

संविधान के भाग 4 (अनुच्छेद 36–51) में निदेशक तत्व समाहित है। इसमें गणतंत्रात्मक संविधान के अधीन राज्य के ध्येय और उद्देश्य प्रतिपादित किये गये है जो कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक समझे गये है। संविधान ने जो आदर्श अपने समक्ष रखा है वह है 'कल्याणकारी राज्य'[2] और 'समाजवादी राज्य'[3] की स्थापना का। अधिकांश निदेशों का लक्ष्य आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र स्थापित करना है जिसका संकल्प उद्देशिका में लिया गया है।

संविधान के भाग 4 में उल्लिखित राज्य की नीति के निदेशक तत्व आयरलैण्ड के संविधान से लिए गये है।

एक समय था जब राज्य का कर्त्तव्य समाज में केवल शान्ति–व्यवस्था बनाये रखना और जनता के प्राण, स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की सुरक्षा तक ही सीमित माना जाता था। जब उक्त धारणा में आमूल परिवर्तन हो चुका है। आज हम एक कल्याणकारी राज्य के नागरिक है, जिसका कर्त्तव्य जन साधारण के सुख एवं समृद्धि की अभिवृद्धि करना है। इसी उद्देश्यों से नीति–निदेशक–सिद्धान्तों में कुछ आर्थिक और सामाजिक लक्ष्यों को निहित किया गया है, जिसका पालन राज्यों को करना अभीष्ट है। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि जनता के हित और आर्थिक लोकतन्त्र की स्थापना के लिए इनको यथाशक्ति कार्यान्वित करने का प्रयास करे।

नीति–निदेशक तत्वों का वर्गीकरण

- सामाजिक और आर्थिक न्याय
- सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी तत्व
- समाज कल्याण सम्बन्धी निदेशक तत्व
- मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993
- निदेशक–तत्वों का महत्व
- नीति–निदेशक तत्व और मूल अधिकारों में सम्बन्ध
- नीति निदेशकों को मूल अधिकारों का दर्जा

4. सरकारी/गैर सरकारी संगठन एवं मानव अधिकार

मानव अधिकारों का क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय है। किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में कोई ऐसी संस्था नहीं है जो मानव अधिकारों को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रभावी ढंग से लागू कर सके। यह अन्तर्राष्ट्रीय विधि के संस्थात्मक पक्ष पर बहुत बड़ी कमजोरी है। राष्ट्रीय संस्था शिक्षा, प्रशिक्षण, अनुसंधान और मानव अधिकार के बारे में अभिकथित उल्लंघनों में निष्पक्ष अन्वेषण द्वारा मानव, अधिकार के बारे में जानकारी बढ़ाएगी। यह सम्बन्धित सरकार से समझौते के माध्यम से प्रभावी उपचार सुनिश्चित कर सकती है या न्यायालय से मानव अधिकार के शिकार को उपचार उपलब्ध करवा सकती है। इस प्रकार घरेलू मानव अधिकार संस्था मानव अधिकारों के संरक्षण के बारे में प्रभावी भूमिका अदा कर सकती है।

मानव अधिकारों के क्षेत्र में राष्ट्रीय संस्था के महत्व को समझते हुए 1946 में ही यूनेस्को ने ऐसी संस्था के लिए विचार व्यक्त किया था। सचिवालय ने 1947 में राज्यों में ऐसे निकाय की स्थापना के लिये अपने ज्ञापन 'मानव अधिकार का पर्यवेक्षण और प्रवर्तन' में सुझाव दिया था।[1] आगे चलकर 1966 में महासभा ने सिविल और राजनीतिक अधिकारों की प्रसंविदा एवं आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की प्रसंविदा के पालन करने के सम्बन्ध में कतिपय कार्यो के सम्पादन करने के लिए 'राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग' के सृजन के प्रस्ताव के औचित्य पर विचार करने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया।

सन् 1993 में मानव अधिकार विश्व सम्मेलन ने ऐसी संस्था या आयोग के महत्व को समझाकर कहा कि मानव अधिकार पर विश्व सम्मेलन "सरकारों से राष्ट्रीय संरचना, संस्थाएं और समाज के अंगों को सबल करने के लिए अनुरोध करता है जो कि मानव अधिकारों की अभिवृद्धि और संरक्षण करने में भाग लेते है।"

मानव अधिकारों के दमन की आलोचना के परिणामस्वरूप 26 दिसम्बर, 1993 को 'मानव अधिकारों के अधिक अच्छे संरक्षण' के लिए तथा उससे सम्बद्ध या उसके आनुषंगिक मामलों के लिए राष्ट्रीय

मानव अधिकार आयोग, राज्य मानव अधिकार आयोग एवं मानव अधिकार न्यायालयों के गठन हेतु प्रावधान करने के लिए भारत के राष्ट्रपति ने एक अध्यादेश जारी किया। बाद में इस अध्यादेश को संसद ने मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के रूप में पारित किया।

एमेन्स्टी इण्टरनेशनलः–

एक गैर सरकारी संगठन एमेन्स्टी इण्टरनेशनल उन व्यक्तियों का विश्वव्यापी आन्दोलन है, जो अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर स्वीकृत मानव अधिकारों का प्रचार करते है। एमेन्स्टी इण्टरनेशनल किसी सरकार राजनैतिक विचारधारा, आर्थिक, हित और धर्म से बिल्कुल स्वतन्त्र है यह किसी प्रकार या राजनैतिक व्यवस्था का सर्मथन या विरोध नही करती है, और न ही यह प्रताड़ित व्यक्तियों के विचारों का समर्थन का विरोध करती है जिनकी यह रक्षा का प्रयास करती है। इसका सम्बन्ध पूर्णतः निष्पक्ष रूप से मानव अधिकारों का संरक्षण करना है। एमेन्स्टी इण्टरनेशनल को वित्तीय सहायता स्थानीय स्वैच्छिक संगठनों द्वारा दी जाती है। कोई भी वित्तीय सहायता किसी भी सरकार से स्वीकार नही की जाती है।

पी०यू०सी०एल०ः–

नागरिक स्वतन्त्रताओं के लिए जन संगठन नागरिकों स्वतन्त्रताओं की रक्षार्थ एक संगठन बनाया गया है जिसका लक्ष्य भी मानव अधिकारों की रक्षा करना है। इस संगठन का नाम (पी०यू०सी०एल०) है यह भी गैर सरकारी संगठन है। जिसमे एक राज्य स्तर का अध्यक्ष होता है और इसमें महामंत्री, संगठन सचिव भी होते है इन व्यक्तियों ने नागरिक स्वतन्त्रताओं के संदर्भ में जन–जागरण अभियान प्रारम्भ करने के लिए सन् 12 जून से 21 जून 2000 में उत्तराखंण्ड का भ्रमण किया था। इस संगठन का कहना था कि विक्रेन्द्रीयकृत नियोजन के लिए 73वें, 74वें संविधान के संशोधन के अन्तर्गत ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में स्थानीय संस्थाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।

भारतीय संविधान हम भारत के लोगों द्वारा अपनाया गया है, और हमने ही भारत को सम्पूर्ण समाजवादी, धर्म निरपेक्ष, प्रजातान्त्रिक गणतन्त्र बनाने का संकल्प किया है तथा हमने स्वयं के लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक अधिकार को सुरक्षित किया है। भारत की सम्प्रभुता भारत के लोगों में निहित है।

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियः–

राष्ट्रीय मानव अधिकार की स्थापना भारत में 27 दिसम्बर,1993 को की गई जब राष्ट्रपति ने अध्यादेश जारी किया था। बाद में लोकसभा ने राष्ट्रपति के अध्यादेश के स्थान पर मानव अधिकार संरक्षण विधेयक 18 दिसम्बर 1993 को पारित किया। यह विधेयक अधिनियम हो गया जब 8 जनवरी, 1994 को इसे राष्ट्रपति की अनुमति मिल गई। इसको मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 कहा जाता है। अधिनियम की धारा 2 में मानव अधिकार की परिभाषा यह कहते हुए की गई है कि ”मानव अधिकार” से अभिप्राय संविधान द्वारा प्रत्याभूत तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सम्मिलित एवं भारत में

न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय व्यक्तियों के जीवन, स्वतंत्रता, समानता एवं गरिमा से है।" अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राज्य मानव अधिकार आयोग और मानव अधिकार न्यायालयों की स्थापना की गई है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम के II से IV अध्याय राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग से सरोकार रखते है। इन अध्यायों में आयोग के विभिन्न पहलुओं के बारे में उपबंध किया गया है जिनका विवेचन किया जा रहा है।

1. अध्यक्ष–सेवानिवृत्त मुख्य न्यायधीश उच्चतम न्यायालय।
2. एक सदस्य जो उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश रहा हो।
3. एक सदस्य जो उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश रह चुका हो।

मानव अधिकार और राष्ट्रीय आयोग

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के अन्तर्गत 'मानव अधिकार' की परिभाषा इस प्रकार की गई है–"मानव अधिकार" से अभिप्राय संविधान द्वारा प्रत्याभूत तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सम्मिलित एवं भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय व्यक्तियों के जीवन, स्वतंत्रता, समानता एंव गरिमा से है।[11] इस परिभाषा में 'मानव अधिकार' की परिधि संविधान में समाविष्ट 'मानव अधिकार' से अधिक व्यापक है, जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सूचीबद्ध अधिकारों को भी अन्तर्विष्ट किया गया है।

राज्य मानवाधिकार आयोगः–

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के साथ–साथ में राज्य मानव अधिकार आयोग का गठन किया जा सकता है। इसका गठन भी बहुत कुछ मिलता–जुलता राष्ट्रीय मानव अधिकार के समान होता है। अन्तर केवल यहाँ इतना होता है कि राज्य में उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश होता है तथा राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का अध्यक्ष उच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) का भुतपूर्व अध्यक्ष होता है।

मानवाधिकार न्यायालय

अधिनियम का अध्याय 6 जिसमें धाराएं 30 और 31 सम्मिलित है, प्रत्येक जिला मे मालव अधिकार न्यायालय से सम्बन्धित है। धारा 30 में मानव अधिकार न्यायालयों की स्थापना के बारे में उपबंध किया गया है। इसके अनुसार–मानव अधिकारों के उल्लंघन से उद्भूत मामलों के त्वरित विचारण हेतु राज्य सरकार अधिसूचना जारी कर प्रत्येक जिले के लिए एक सेशन न्यायालय को एक मानव अधिकार न्यायालय के रूप में विनिर्दिष्ट कर सकती है।

5. निष्कर्ष

मानव अधिकार मनुष्य के व्यक्तित्व में निहित अधिकार हैं ये वे आवश्यक परिस्थितियां है जिनके अभाव में मनुष्य का स्वाभाविक विकास नही हो सकता। ये वे सुविधाओं का समूह है जो मनुष्य व पशु या मनुष्य व दास में अन्तर करते है। ये मनुष्य की गरिमा से जुड़े है। शोधार्थी ने 1215 के मैग्नाकार्टा, 1776 ई० की अमेरिकी स्वतन्त्रता घोषणा, 1789 की फ्राँसीसी क्रान्ति, 1941 रूजवेल्ट घोषणा, 1942 अटलांटिक चार्टर इत्यादि में उद्घोषित मानव अधिकारों में परिचर्चा करते हुए यह बताने का प्रयास किया है कि ये किस प्रकार वर्तमान समय में ये ठोस रूप ग्रहण करनें में सफल हुए है।

मानव अधिकारों को मूर्त रूप देने के प्रयास में संयुक्त राष्ट्र संघ का महत्वपूर्ण योगदान है। 1944 के डम्बार्टन ओक्स सम्मेलन में इन्हें मुखरित किया गया था। तत्पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रस्तावना, अनुच्छेद–1, अनुच्छेद–13, अनुच्छेद–55, अनुच्छेद–56, अनुच्छेद–62, अनुच्छेद–68 में भी इन्हें परिभाषित किया गया। मानव अधिकारों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने में अन्तर्राष्ट्रीय, मानव अधिकार घोषणा– 1948, एक मील का पत्थर है। इस घोषणा पत्र में तीस मानव अधिकार विवेचित किए गए है।

भारतीय संविधान के भाग III में बहुत से अधिकार समाविष्ट किए गये है जिनको 'मूल अधिकार' कहा जाता है। 'मूल अधिकार' के अन्य–असंक्राम्य अधिकार होते है क्योंकि वे प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व में अन्तर्निहित होते है। ये अधिकार समाज में मानव जीवन की दशाएं है। समाज में विकास के लिए ये अधिकार अपरिहार्य है। ये अधिकार सभ्य समाज की मूलभूत मान्यताएं है।

अतः विवेचना से स्पष्ट है की भारतीय संविधान में मानव अधिकार पूर्ण रूप से विद्यमान है! और भारत के नागरिकों के साथ–साथ विदेशीयों को भी प्राप्त है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाए भी इसी बात की ओर संकेत करती है की भारतीय संविधान अपने आप में पूर्ण मानव अधिकारों की घोषणा करता है।

ग्रंथ सूची

- आनंद, सी. एल., संवैधानिक कानून और भारत सरकार का इतिहास, भारत सरकार अधिनियम 1935 और भारत का संविधान, (दिल्ली: यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग, 1986)A
- ऑस्टिन, ग्रैनविले, भारतीय संविधान: एक राष्ट्र की आधारशिला, (ऑक्सफोर्ड: क्लेरेंडन प्रेस, 1966)A
- रामचरण बी.जी., द कॉन्सेप्ट ऑफ़ ह्यूमन राइट्स इन कंटेम्परेरी इंटरनेशनल लॉ, (कनाडा: कैनेडियन ह्यूमन राइट्स ईयरबुक, 1983)A
- बाजवा, जी.एस., ह्यूमन राइट्स इन इंडिया, अनमोल प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1995।
- मेहता, पी.एल. और वर्मा नीना, भारतीय संविधान के तहत मानवाधिकार, दीप और दीप प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999।
- सुरेश एच., ऑल ह्यूमन राइट्स आर फंडामेंटल राइट्स, (नई दिल्ली: यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग, 2010)